डॉल्हिन पधारो देवी

बनाम

इंद्रजीत तिवारी एवं अन्य

(सिविल अपील सं 1609-10, वर्ष 2001)

31 जनवरी, 2008

[डॉ. अरिजीत पसायत एवं पी. सताशिवम, जे.जे.]

बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) अधिनियम, 1961, धारा 43 - सीमा निर्धारण कार्यवाही - संबंधित अधिकारियों के क्षेत्राधिकार पर सवाल उठाते हुए रिट याचिका में चुनौती दी गई - सीलिंग अधिकारियों का आदेश क्षेत्राधिकार के बाहर था इस घोषणा के लिए बाद में किए गए मुकदमे को खारिज किया गया - मुकदमे की पोषणीयता के सम्बन्ध में - अभिनिर्धारित किया गयाः इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि सीलिंग अधिकारियों के पास उठाए गए विवाद का निर्णय करने का क्षेत्राधिकार था और क्षेत्राधिकार की दलील पर पहले की रिट याचिका में चर्चा की गई थी, मुकदमा धारा 43 के तहत वर्जित है।

दीवानी न्यायालय का-क्षेत्राधिकार - वैधानिक प्रावधान द्वारा बहिष्करण के सम्बन्ध में- अभिनिर्धारित किया गयाः इस तरह का प्रतिबंध

उन मामलों में लागू नहीं होता है जहां दीवानी अदालत के समक्ष उठाई गई याचिका मामले की जड़ तक जाती हों और यदि उसे बरकरार रखा जाता है तो यह निष्कर्ष निकलता हो कि आक्षेपित आदेश शून्य है ।

अधिकतम सीमा निर्धारण न्यायालय द्वारा बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) अधिनियम, 1961 की धारा 16 (3) के तहत आवेदनों के संबंध में आदेश पारित किया गया। अपीलार्थी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका में इसे असफल रूप से चुनौती दी गई थी, जिसमें अधिनियम के तहत अधिकारियों के क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दा भी उठाया गया था। इसके बाद, अपीलार्थी ने एक मालिकाना हक का मुकदमा इस घोषणा हेतु दायर किया था कि अधिकतम सीमा निधार्रण न्यायालय द्वारा पारित आदेश क्षेत्राधिकार से बाहर थे और अपीलार्थी (खरीददार) पर बाध्यकारी नहीं थे। प्रत्यर्थी संख्या 1-प्रतिवादी द्वारा अधिनियम की धारा 43 में वर्णित वर्जितता को देखते हुए मुकदमे की पोषणीयता के संबंध में आपत्ति दर्ज कराई गई। आपत्ति को अस्वीकार किया गया। सिविल पुनरीक्षण में, उच्च न्यायालय द्वारा आपत्ति स्वीकार की गई। उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ दायर पुनर्विलोकन को भी खारिज किया गया। ऐसे में वतर्मान अपीलें प्रस्तुत की गईं।

याचिकाओं को खारिज करते हुए अदालत ने अभिनिर्धारित किया गया :

1. विधायिका द्वारा सिविल अपीलों में सिविल अधिकारों से संबंधित क्षेत्राधिकार को वर्जित किया जा सकता है, लेकिन इस संबंध में वैधानिक प्रावधान स्पष्ट होना चाहिए। यदि प्रासंगिक प्रावधानों के तहत दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को वर्जित किया जाता है तो यह उन मामलों में लागू नहीं होगा जहां सिविल न्यायालय के समक्ष उठाई गई याचिका मामले की जड़ तक जाती हो और यदि उसे बरकरार रखा जाता है तो उससे यह निष्कर्ष निकलता हो कि आक्षेपित आदेश शून्य है। यदि पारित आदेशों की कार्यवाही पूर्णतया क्षेत्राधिकार से बाहर है तो सामान्य सिविल न्यायालय में वाद के पोषणीय होने पर रोक लागू नहीं होगी। [पैरा 6] [245-बी, सी, डी]

2. उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिलिखित किया गया है कि बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अधिशेष भूमि अधिग्रहण) अधिनियम, 1961 की धारा 43 के सामान्य अध्ययन से ज्ञात होता है कि हालांकि अधिनियम के तहत पारित आदेश के खिलाफ कोई मुकदमा पोषणीय नहीं है, लेकिन अधिकारियों के उक्त आदेश को पारित करने के क्षेत्राधिकार के संबंध में दीवानी अदालत द्वारा तय किया जा सकता है। उच्च न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया कि चूंकि जिन

अधिकारियों ने अधिकतम सीमा वाले मामलों और/या अपील याचिकाओं में आदेश पारित किया था, उनके पास अधिकतम सीमा निधार्रण अधिनियम की धारा 16(3) के तहत उठाए गए विवाद का फैसला करने के लिए क्षेत्राधिकार था यह विवादित नहीं है और साथ ही चूंकि इस तरह के क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दा वादी द्वारा पूर्व रिट याचिकाओं में भी उठाया गया था, जिन्हें इस अदालत ने खारिज कर दिया था, ऐसे में उच्च न्यायालय का यह मानना सही था कि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत मालिकाना हक का मुकदमा अधिनियम की धारा 43 के तहत पोषणीय नहीं है। [पैरा 6 और 7] [245-ई, एफ, जी; 246-ए]

राम स्वरूप एवं अन्य बनाम शिकार चंद एवं अन्य, ए.आई.आर. 1966 एससी 893-पर आश्रित।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं- 1609-10, वर्ष 2001.

क्रमशः सिविल पुनरीक्षण संशोधन सं. 1297/1993 और सिविल पुनरीक्षण सं. 155/1997 में पटना उच्च न्यायालय के अंतिम आदेश और निर्णय दिनांक 28.04.1997 एवं दिनांक 11.12.1998 से।

अखिलेश कुमार पांडे, सुधांशु सरन और शेफाली जैन अपीलार्थी की ओर से।

मनीष मोहन, उमंग शंकर, पंकज प्रकाश, संदीप चतुर्वेदी एवं उग्र शंकर प्रसाद प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय डॉ. अरिजीत पसायत, जे. द्वारा सुनाया गया।

1. अपीलों में पटना उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा, दर्ज सिविल पुनरीक्षण को खारिज करने के निर्णय और पुनर्विलोकन याचिका में आदेश को चुनौती दी गई है। उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती विद्वान मुंसिफ, बिक्रमगंज द्वारा 1992 के टी.एस. नंबर 162 में पारित आदेश को दी गई थी, जिनके द्वारा प्रतिवादी-याचिकाकर्ता जो की वर्तमान अपील में प्रत्यर्थी नंबर 1 हैं, उसके द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई आपत्ति याचिका को खारिज कर दिया गया था। उसका कहना था कि बिहार भूमि सुधार (सीमा क्षेत्र का निर्धारण और अधिशेष भूमि का अधिग्रहण) अधिनियम, 1961 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 43 के मद्देनजर मुकदमा अयोग्य था।

2. संक्षेप में तथ्यात्मक स्थिति इस प्रकार है:

अधिनियम की धारा 16(3) के तहत दो प्री-एम्प्शन आवेदन प्री-एम्प्टीयर प्रतिवादी जो की यहां प्रत्यर्थी नंबर 1 के द्वारा दायर किए गए थे। इन्हें वर्ष 1973 के सीलिंग केस नंबर 19 और 20 के रूप में दर्ज किया गया था। वादी यानी क्रेता द्वारा आपत्ति दर्ज कराई गई। भूमि सुधार उपायुक्त, सासाराम द्वारा दोनों याचिकाओं को खारिज कर दिया गया। इसके

बाद वर्ष 1974 में अपील संख्या 49 और वर्ष 1975 में अपील सं. 52 दायर की गईं, जिन्हें विद्वान अतिरिक्त कलेक्टर द्वारा स्वीकार किया गया। क्रेता-वादी, यहां अपीलकर्ता ने, इन्हें वर्ष 1983 के सीडब्ल्यूजेसी संख्या 5970 और 5971 के द्वारा उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई और अधिनियम के तहत अधिकारियों के क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दा उठाया गया। उच्च न्यायालय द्वारा 11 अक्टूबर, 1991 को एक ही आदेश और निर्णय द्वारा रिट याचिकाओं को खारिज कर दिया गया। दोनों रिट याचिकाओं के खारिज होने के बाद क्रेता-वादी (यहां अपीलकर्ता) ने मुंसिफ कोर्ट, बिक्रमगंज में 1992 में मालिकाना हक का मुकदमा नंबर 162 यह घोषणा कराने के लिए दर्ज कराया कि वर्ष 1973 के सीलिंग केस नंबर 19 और 20 में अधिकतम सीमा निधार्रण न्यायालय द्वारा पारित आदेश क्षेत्राधिकार के बाहर थे और खरीददार पर बाध्यकारी नहीं थे। वर्तमान में प्रत्यर्थी नंबर 1 ने उपस्थित होकर मुकदमे की पोषणीयता के संबंध में निचली अदालत के समक्ष एक याचिका दायर की। उसके द्वारा यह इंगित किया गया कि उक्त मुकदमा अधिनियम की धारा 43 के तहत वर्जित था और निचली अदालत को अधिनियम के तहत पारित आदेश के खिलाफ किये गये उक्त मुकदमे पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। विद्वान मुंसिफ द्वारा पक्षों को सुनने के बाद आवेदन खारिज किया गया था और इसलिए सिविल पुनरीक्षण दर्ज कराई गई। प्रतिवादी जो कि वर्तमान अपील में प्रत्यर्थी संख्या 1 है, वह उच्च न्यायालय के नंद किशोर सिंह

बनाम सत्य नारायण सिंह और अन्य (ए.आई.आर.1978 पटना 315) के मामले में निर्णय पर निर्भर रहा। उच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय के आधार और तथ्यात्मक स्थिति पर विचार करने के बाद माना कि अधिनियम के तहत अधिकारियों के क्षेत्राधिकार से संबंधित प्रश्न विशेष रूप से रिट याचिकाओं में थे। 11 अक्टूबर, 1991 के निर्णय द्वारा रिट याचिकओं को खारिज कर दिया गया। अतः यह अभिनिधार्रित किया गया कि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा दायर मालिकाना हक का मुकदमा अधिनियम की धारा 43 के तहत पोषणीय नहीं है।

3. अपीलों के समर्थन में, अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने कथन किया कि उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गलत है और उच्च न्यायालय के तर्क को बरकरार नहीं रखा जा सकता है।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीओं के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश का समर्थन किया।

5. अधिनियम की धारा 43 इस प्रकार है:

"43. सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित:

(1) इस अधिनियम में दिए गए प्रावधानों को छोड़कर, किसी भी सिविल न्यायालय को किसी भी ऐसे प्रश्न को तय करने, निर्णय लेने या निपटाने का क्षेत्राधिकार नहीं होगा जिसे इस अधिनियम के द्वारा या उसके तहत राजस्व बोर्ड

(xxxx) अपीलीय प्राधिकारी या कलेक्टर द्वारा तय, निर्णित या निपटाया जाना हो।

(2) राजस्व बोर्ड, (xxxx) अपीलीय प्राधिकारी या कलेक्टर के द्वारा इस अधिनियम के अन्तगर्त किए गए किसी भी आदेश पर किसी भी अदालत में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा।"

6. यह सुदृढ रुप से स्थापित है कि विधायिका द्वारा सिविल अपीलों में सिविल अधिकारों से संबंधित क्षेत्राधिकार को वर्जित किया जा सकता है, लेकिन इस संबंध में वैधानिक प्रावधान स्पष्ट होना चाहिए। यदि प्रासंगिक प्रावधानों के तहत दीवानी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को वर्जित किया जाता है तो यह उन मामलों में लागू नहीं होगा जहां सिविल न्यायालय के समक्ष उठाई गई याचिका मामले की जड़ तक जाती हो और यदि उसे बरकरार रखा जाता है तो उससे यह निष्कर्ष निकलता हो कि आक्षेपित आदेश शून्य है। इस स्थिति पर इस न्यायालय द्वारा राम स्वरूप और अन्य बनाम शिकार चंद और अन्य.[एआईआर 1966 एससी 893] में भी प्रकाश डाला गया है। यदि पारित आदेशों की कार्यवाही पूर्णतया क्षेत्राधिकार से बाहर है तो सामान्य सिविल न्यायालय में वाद की पोषणीयता पर रोक लागू नहीं होगी। उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिलिखित किया गया है कि अधिनियम की धारा 43 के सामान्य अध्ययन से ज्ञात होता है कि हालांकि अधिनियम

के तहत पारित आदेश के खिलाफ कोई मुकदमा पोषणीय नहीं है, लेकिन अधिकारियों के उक्त आदेश को पारित करने के क्षेत्राधिकार के संबंध में दीवानी अदालत द्वारा तय किया जा सकता है। उच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियाँ प्रासंगिक हैं:

> "9. वर्तमान मामले में, एसबीएलआर और/या अतिरिक्त कलेक्टर, जिन्होंने अधिकतम सीमा वाले मामलों और/या अपील याचिकाओं में आदेश पारित किया था, उनके पास अधिकतम सीमा अधिनियम की धारा 16(3) के तहत उठाए गए विवाद का फैसला करने का क्षेत्राधिकार था, यह विवादित नहीं है।
>
> 10. इस तरह के क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दे को वादी-विरोधी पक्ष द्वारा अपनी पूर्व रिट याचिकाओं में भी उठाया गया था, जिन्हें इस अदालत द्वारा खारिज कर दिया गया था।"

7. उपरोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा दायर मालिकाना हक का मुकदमा अधिनियम की धारा 43 के तहत पोषणीय नहीं है।

8. राम स्वरूप के मामले (उपरोक्त) में इस अदालत द्वारा जो कहा गया है और ऊपर उद्धृत पैराग्राफ 9 और 10 में उच्च न्यायालय की जो

टिप्पणियां हैं, उनको ध्यान में रखते हुए, हमारा यह अपरिहार्य निष्कर्ष है कि अपीलें बिना किसी योग्यता के है और खारिज किये जाने योग्य हैं।

के.के.टी.

याचिकाएं खारिज की गईं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल **'सुवास'** की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी आदित्य वशिष्ठ (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।